



Date: 23-04-25

Matters that count

Attempts to intimidate the judiciary pose a threat to democracy

Editorial

The Supreme Court of India has been subjected to unfounded criticism by sections of the ruling BJP, and Vice-President Jagdeep Dhankhar, with regard to the separation of powers between the various branches of the government, and the principle of checks and balances. Not surprisingly, a Supreme Court bench took note of the charge that it was intruding into executive and legislative functions. In one petition, the Court was urged to direct the Centre to act under Articles 355 and 356 to deal with the situation of violence in West Bengal. In another, the Court's intervention was sought to curtail obscene content on online platforms. The Calcutta High Court had earlier ordered the deployment of Central forces to stem violence in Murshidabad in West Bengal. Judicial review of legislative and executive decisions is an integral part of India's constitutional democracy. Decisions of the executive and the legislature can be examined by the judiciary to determine whether they are consistent with the Constitution, and even constitutional amendments are subject to the 'basic structure' test. There are multiple constitutional avenues for judicial intervention in the making and enforcement of law. Article 13 gives the judiciary the power to strike down laws that are violating fundamental rights. Articles 32 and 226 give the Supreme Court and High Courts, respectively, the power to issue writs for the enforcement of fundamental rights, and beyond.

The notion that the judiciary is subservient to legislature is out of line with the constitutional scheme. In fact, the judiciary is expected to insulate the rule of law from the pressure of public opinion that members of the legislature represent. It is in this constructive friction between various institutions of the state that a society can achieve stability in governance. The argument that legislatures can pass any law on the basis of a majority is a majoritarian argument. The erasure of the distinction between the executive and legislature has already created a crisis of accountability in governance at the national and State level in India. The attempt to intimidate the judiciary in the name of legislative supremacy is a threat to democracy - not its furtherance. In the recent judgment that set timelines for the Governor and President for acting on laws passed by the Assembly, the Supreme Court restored the authority of the elected legislatures, which was being trampled upon by an unelected Governor and arbitrary actions by the President. The critics of the judiciary miss this point altogether.



Date: 23-04-25

आतंक का घिनौना चेहरा

संपादकीय

कश्मीर में एक बार फिर जिहादी आतंक का घिनौना - बर्बर चेहरा दिखा। आतंकियों ने पहलगाम में निर्दोष-निहत्थे पर्यटकों की जिस तरह पहचान पता करके गोलियां बरसाईं, उससे यही पता चलता है कि वे केवल खौफ ही नहीं पैदा करना चाहते थे, बल्कि बड़ी संख्या में लोगों का खून बहाकर दुनिया का ध्यान भी खींचना चाहते थे। यह इससे साबित होता है कि उन्होंने ऐसे समय पर्यटकों को निशाना बनाया, जब अमेरिकी उपराष्ट्रपति भारत में हैं और भारतीय प्रधानमंत्री सऊदी अरब में इस हमले ने यह प्रकट किया कि कश्मीर में बचे-खुचे आतंकी किसी भी सीमा तक गिरने पर आमादा हैं। आतंकियों ने उन पर्यटकों को निशाना बनाया, जो कश्मीरियों की रोजी-रोटी को ही सहारा देने कश्मीर गए थे। उन्होंने केवल पर्यटकों की जान ही नहीं ली, बल्कि कश्मीरियों के पेट पर लात मारने का भी काम किया। इस भीषण आतंकी हमले के बाद घाटी में पर्यटन संबंधी कारोबार करीब-करीब ठप पड़ना तय है। आखिर इतनी भयावह घटना के बाद कौन पर्यटक कश्मीर की ओर रुख करेगा ? आतंकियों ने पूरे देश में आक्रोश की लहर पैदा करने वाली घटना को अंजाम दिया है। अनुच्छेद 370 हटाए जाने के बाद पहली बार कश्मीर में इतना बड़ा आतंकी हमला हुआ है। आतंकियों और उनके समर्थकों को करारा जवाब दिया जाना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है।

पहलगाम में आतंकी हमले की गंभीरता इससे प्रकट होती है कि जहां गृहमंत्री अमित शाह आनन-फानन श्रीनगर के लिए रवाना हुए, वहीं सऊदी अरब गए प्रधानमंत्री मोदी ने यह संकल्प जताया कि हमले के दोषियों को बखशा नहीं जाएगा। यह संकल्प तभी पूरा होगा, जब आतंकियों को शह और सहयोग देने वाले पाकिस्तान को निर्णायक रूप से सबक सिखाया जाएगा। आतंक से लड़ने का संकल्प लेने के साथ ही उसे पूरा करने की ठोस रणनीति भी बनानी होती है। कम से कम अब तो भारत को इस नतीजे पर पहुंचने में देर नहीं करनी चाहिए कि आतंकियों और उन्हें पालने-पोसने वालों की कमर तोड़ने के लिए हर क्षण तत्पर रहना ही समझदारी है। यदि पहलगाम के आतंकी हमले की जिम्मेदारी पाकिस्तान पोषित लश्कर के मुखौटा संगठन ने न ली होती, तो भी इसमें संदेह नहीं रहता कि यह हमला पाकिस्तान के इशारे पर किया गया। इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि चंद्र दिन पहले ही पाकिस्तान के सेनाध्यक्ष आसिम मुनीर ने किसी जिहादी की तरह हिंदुओं और भारत के खिलाफ अपनी घृणा का भद्दा प्रदर्शन किया था। यह मानने के अच्छे-भले कारण हैं कि पाकिस्तान सुलगते बलूचिस्तान से दुनिया का ध्यान हटाना चाहता है और उसे यह रास नहीं आ रहा कि कश्मीर में स्थितियां तेजी से सामान्य होती

जा रही हैं भारत को पाकिस्तान के शैतानी इरादों के प्रति और अधिक सतर्क रहना चाहिए था। वह न पहले भरोसे लायक था और न अब ।

Date: 23-04-25

टकराव की राह पर विधायिका - न्यायपालिका

विकास सारस्वत, (लेखक इंडिक अकादमी के सदस्य एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

तमिलनाडु राज्य बनाम राज्यपाल मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ द्वारा की गई आलोचना ने न्यायपालिका और विधायिका के बीच फिर एक बार टकराव की स्थिति पैदा कर दी है। तमिलनाडु सरकार की ओर से विधानसभा में पारित 10 विधेयकों को राज्यपाल की सहमति रोके रखने का मामला सर्वोच्च न्यायालय पहुंचा था। अपने अनूठे निर्णय में न्यायालय ने न सिर्फ इन लंबित विधेयकों को राज्यपाल की सहमति के बिना ही मंजूर घोषित किया, बल्कि राज्यपाल के लिए तीन माह के भीतर ऐसे बिलों को वापस विधानसभा भेजने अथवा राष्ट्रपति के समक्ष विचार हेतु प्रेषित करने की समयसीमा भी निश्चित कर दी। इतना ही नहीं, न्यायालय ने अपने फैसले में राष्ट्रपति को भी निर्देश दिया कि उन्हें राज्यपाल द्वारा सुरक्षित गए विधेयकों पर तीन माह के भीतर निर्णय लेना होगा। जस्टिस जेबी पाडीवाला और आर महादेवन की पीठ ने कहा कि ऐसे विधेयकों पर राष्ट्रपति की निष्क्रियता के खिलाफ राज्य अदालत जा सकते हैं।

सुप्रीम कोर्ट के निर्णय ने राज्यपाल की शक्तियों का अधिग्रहण कर विधायिका के कार्य में हस्तक्षेप तो किया ही, संघीय ढांचे में केंद्र की ओर शक्ति के झुकाव ने इसी पर आपत्ति जताई। उन्होंने दिल्ली उच्च न्यायालय के जज यशवंत वर्मा के घर मिले अधजले नोटों के मामले में कोई एफआइआर न दर्ज किए जाने पर भी प्रश्न खड़े किए। समवर्ती सूची में उल्लिखित विषयों पर केंद्रीय कानूनों की सर्वोच्चता, सातवीं अनुसूची में शामिल होने से रह गए अवशिष्ट विषयों पर केंद्र को कानून बनाने का अधिकार अनुच्छेद 356 के अंतर्गत राष्ट्रपति शासन लगाने का अधिकार ऐसे कुछ प्रविधान हैं, जो केंद्र की सर्वोच्चता को स्पष्ट रूप से रेखांकित करते हैं। अनु. 355 एक ऐसी शासकीय व्यवस्था की कल्पना करता है, जिसमें केंद्र पर यह सुनिश्चित करने का भार होता है कि राज्य सरकारें अपने दायित्व का पालन संवैधानिक प्रविधानों के अनुरूप करें। इसीलिए राष्ट्रपति द्वारा राज्यपाल की नियुक्ति की जाती है। गौर करने वाली बात यह है कि राष्ट्रपति की अपेक्षा राज्यपाल के पास कहीं अधिक और वास्तविक शक्तियां होती हैं। कानून एवं व्यवस्था बिगड़ने या फिर असंवैधानिक कार्यकलापों का मामला संज्ञान में आने पर वह विधानसभा भंग करने की सिफारिश भी कर सकता है।

अनुच्छेद 200 के अंतर्गत स्वीकृति हेतु राज्यपाल के समक्ष आए विधेयकों को अनुमति देने या राष्ट्रपति द्वारा विचार के लिए आरक्षित रखने की कोई सीमा नहीं है। जिन 10 विधेयकों को लेकर राज्य सरकार ने याचिका

दायर की, उनमें एक विश्वविद्यालयों में कुलपति के चयन का अधिकार राज्यपाल से हटाकर मंत्री परिषद को देने की बात करता है। ऐसे में याचिका का दायरा सीमित कर विषय केंद्रित किया जा सकता था, परंतु राज्यपाल और राष्ट्रपति दोनों के लिए प्रत्येक विधेयक को अनुमति की समयसीमा में बांधे जाने ने न केवल राज्यपाल के पद को कमजोर किया, बल्कि राज्य को एक तरह से केंद्रीय पर्यवेक्षी अधीनता से मुक्त कर दिया। ऐसी व्यवस्था के खतरनाक परिणाम हो सकते हैं। नागरिकता संशोधन और वक्फ कानून के विरोध में पारित प्रस्तावों के जरिये विभिन्न विधानसभाएं कई बार अपने भयावह मंतव्यों को प्रकट कर चुकी हैं।

हाल में कर्नाटक के राज्यपाल थावर चंद गहलोत ने सरकारी ठेकों में मुसलमानों को चार प्रतिशत आरक्षण देने संबंधी प्रस्तावित विधेयक को राष्ट्रपति के पास विचार के लिए भेजा है। मजहबी आधार पर आरक्षण की व्यवस्था तय करने वाला यह विधेयक पूरी तरह गैर संवैधानिक है, पर शीर्ष अदालत का हालिया निर्णय राष्ट्रपति को यह विधेयक पास करने के लिए बाध्य करेगा। ऐसी सूरत में इसके निस्तारण का एकमात्र उपाय फिर सर्वोच्च न्यायालय में मुकदमे के रूप में ही होगा। यह संकट उस बढ़ती प्रवृत्ति का द्योतक है, जिसमें न्यायपालिका विधायिका के ऊपर एक सुपर वीटो के रूप में उभरती दिखाई दे रही है। चाहे राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (एनजेएसी) को रद्द करना हो या कृषि कानूनों के क्रियान्वयन पर रोक, विधायिका के क्षेत्र में न्यायपालिका का अतिक्रमण जारी है। पिछले कुछ समय से संसद द्वारा पारित करीब-करीब हर विधेयक का न्यायपालिका द्वारा तुरंत संज्ञान लेना भी एक परिपाटी बन गई है। इस कारण राष्ट्रपति द्वारा मंजूरी दिए जाने के एक सप्ताह बाद ही सर्वोच्च न्यायालय में वक्फ कानून पर सुनवाई शुरू हो गई।

लंबे समय तक संविधान की मूल संरचना के सिद्धांत को उपयोग में लाने के बाद अब अनुच्छेद 142 न्यायिक अतिक्रमण का आधार बन गया है। तमिलनाडु के मामले में भी न्यायालय ने इसी का सहारा लिया है।

अनु. 142 वह असाधारण प्रविधान हैं, जो सर्वोच्च न्यायालय को उन मामलों में 'पूर्ण न्याय' प्रदान करने की गुंजाइश देता है, जहां कोई प्रत्यक्ष कानूनी उपाय मौजूद न हो। अपने निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संघीय कार्यपालिका को किसी विधेयक की वैधता निर्धारित करने में न्यायालयों की भूमिका नहीं निभानी चाहिए तथा उसे अनुच्छेद 143 के अंतर्गत ऐसे प्रश्न को सर्वोच्च न्यायालय भेजना चाहिए। इस हिसाब से विभिन्न राज्यपालों द्वारा राष्ट्रपति के लिए आरक्षित प्रत्येक विधेयक को सर्वोच्च न्यायालय के पास भेजना न सिर्फ अव्यावहारिक है, परंतु स्वयं न्यायाधीशों को नियुक्त करने वाले राष्ट्रपति की शक्तियों को नियंत्रण करने वाला न्यायिक तख्तापलट भी है। 2015 में एनजेएसी रद्द होने और 2023 में न्यायाधीशों की नियुक्ति में देरी पर न्यायालय ने अनु. 142 के उपयोग की चेतावनी दी थी, पर जस्टिस वर्मा के घर अधजले नेटों की बरामदगी को उसने अनु. 142 के प्रयोग के लायक नहीं समझा। उपराष्ट्रपति की पीड़ा जायज है। यदि न्यायिक अतिक्रमण पर रोक नहीं लगी तो भारतीय लोकतंत्र न्यायिक अधिनायकवाद का रूप ले सकता है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 23-04-25

मजबूत भारत के लिए विनिर्माण पर हो जोर

अरुण मायरा



अमेरिका को फिर से महान बनाने के लिए डॉनल्ड ट्रंप जो कारोबारी कदम उठा रहे हैं उन्होंने वैश्विक व्यापार व्यवस्था को बुरी तरह झिंझोड़ दिया है। ट्रंप के निशाने पर मुख्यरूप से चीन है। कुछ देश अमेरिका के साथ समझौता करना चाहते हैं। भारत के वार्ताकारों को भी दीर्घकालिक रणनीति को ध्यान में रखकर काम करना चाहिए ताकि देश की औद्योगिक क्षमताओं को और अधिक गहरा बनाया जा सके, जो कई मायनों में चीन से पीछे हैं। जापान और चीन के औद्योगिक विकास का इतिहास हमें उपयोगी सबक देता है। वे अमेरिका के साथ कारोबारी सौदों के लिहाज से भारत की तुलना में बहुत मजबूत स्थिति में हैं।

अमेरिका को उनके विनिर्माताओं की आवश्यकता है और वे अपने विशाल व्यापार अधिशेष को अमेरिकी राजकोष में निवेश करके अमेरिकी अर्थव्यवस्था को सहारा देते हैं।

जापान और चीन ने रणनीतिक रूप से मजबूत विनिर्माण उद्योगों का निर्माण किया। प्रतिस्पर्धी लाभ के सिद्धांत के आधार पर मुक्त व्यापार दीर्घावधि में हर किसी को लाभ प्रदान करता है। अगर हर देश केवल वही उत्पादन करता जो वह दूसरों से बेहतर कर सकता है और दूसरों से वही खरीदता जो दूसरे बेहतर उत्पादित कर पाते हैं, तो दुनिया भर में सभी लोग किफायती और उत्कृष्ट उत्पादों से लाभान्वित होते।

सैद्धांतिक नज़रिये के साथ दिक्कत यह है कि जिंस को छोड़ दिया जाए तो प्रतिस्पर्धी बढ़त स्थिर नहीं रहती। औद्योगीकरण एक प्रक्रिया है जहां उद्यमी उन क्षमताओं को सीखते हैं जो उनके पास पहले नहीं थीं। व्यापार प्रबंधन प्रतिस्पर्धी बढ़त को बनाए रखने का तरीका है। हर वह देश जिसने प्रभावी ढंग से औद्योगीकरण किया (इनमें 19वीं सदी का अमेरिका शामिल है), उसने अपने उद्योगों की रक्षा की और साथ ही औद्योगिक क्षमताओं में इजाफा किया। औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देश बौद्धिक संपदा पर अपने एकाधिकार का बचाव करते हैं। दूसरी तरफ, वे 'संरक्षणवादी' सरकारी नीतियों का हौवा खड़ा करके विकासशील देशों में उद्यमों के क्षमता विकास को रोकते हैं।

कम मुक्त से अधिक मुक्त व्यापार की ओर बढ़ने में आयात शुल्क को चरणबद्ध तरीके से कम करना शामिल है। किसी भी विकासशील अर्थव्यवस्था में तैयार उत्पादों को असेंबल करने वालों की संख्या उत्पादकों से हमेशा अधिक रहती है। असेंबल करना विनिर्माण का सबसे सरल रूप है। असेंबल करने वाले अंतिम उत्पाद को सीधे जनता को बेचते हैं। उनके ब्रांड अधिक नजर आते हैं और उन्हें मशीनरी आदि का उत्पादन करने वालों की तुलना अधिक लोकप्रिय समर्थन मिलता है।

जब किसी अर्थव्यवस्था में खपत बढ़ती है तो असेंबल करने वाले भी तेजी से बढ़ते हैं। वे उपभोक्ताओं को कम कीमत पर उत्पाद मुहैया कराने के लिए कलपुर्जों के रियायती आयात की मांग करते हैं। उधर कलपुर्ज बनाने वाले मशीनों के रियायती आयात की मांग करते हैं ताकि वे अपनी उत्पादन लागत कम कर सकें। यह कारोबारी नीति आयातकों और असेंबल करने वालों को घरेलू पूंजीगत वस्तु निर्माताओं पर तरजीह देती है और धीरे-धीरे देश की औद्योगिक क्षमताओं में कमी आने लगती है। औद्योगिक प्रतिस्पर्धा की दृष्टि से इसके दीर्घकालिक परिणाम बहुत बुरे साबित होते हैं। भारत ने 1990 के दशक में औद्योगिक नीतियों को समय के पहले त्याग दिया। इसके विपरीत चीन के पूंजीगत वस्तु क्षेत्र का आकार भारत की तुलना में कई गुना अधिक हो गया और चीन द्वारा उच्च तकनीक आधारित निर्माण का निर्यात हमसे 48 गुना अधिक है।

जापान ने दूसरे विश्व युद्ध के बाद रणनीतिक रूप से अपने उद्योगों को तैयार किया। औद्योगिक और व्यापारिक नीतियों को अंतरराष्ट्रीय व्यापार और उद्योग मंत्रालय यानी एमआईटीआई के माध्यम से समन्वित किया गया। इसमें जापान के उद्योग निर्माताओं को साथ लिया गया। सन 1990 तक जापान विनिर्मित वस्तुओं के मामले में दुनिया की फैक्ट्री बन चुका था। इनमें वाहन और इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद और मशीनरी सभी शामिल थे।

उस समय चीन पूरी तस्वीर में कहीं नहीं था परंतु 2010 तक वह दुनिया की सबसे बड़ी फैक्ट्री बन गया। इसके लिए उसने नियम आधारित विश्व व्यापार संगठन और बौद्धिक संपदा अधिकारों के व्यापार संबंधित पहलू वाली व्यापार व्यवस्था को रणनीतिक ढंग से अपनाया, जिसने 1995 में टैरिफ और व्यापार पर सामान्य समझौते का स्थान लिया था।

मुक्त व्यापार कभी भी सही मायनों में निरपेक्ष व्यापार नहीं रहा। सबसे ताकतवर देश नियम बनाते हैं और जब वे नियम उनके अनुरूप नहीं रहते तो उन्हें बदल देते हैं। विश्व व्यापार संगठन के बाद औद्योगिक नीतियों को रोक दिया गया क्योंकि वे घरेलू उद्योगों को बचाती हैं। ट्रिप्स ने अमेरिका और पश्चिमी कंपनियों की बौद्धिक संपदा का बचाव किया जिसके जरिये वे वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला में मूल्य निर्माण को नियंत्रित करती हैं। सच तो यह है कि चीन के उद्योगों ने अमेरिकी उद्योगों के तर्ज पर उत्पादन करना सीख लिया।

भारत की बात करें तो देश इस समय एक चौराहे पर खड़ा है। क्या उसे पश्चिमी व्यापारिक दबाव के सामने झुक जाना चाहिए या फिर अपनी औद्योगिक शक्ति तैयार करनी चाहिए ? भारत एक बड़ा बाजार हो सकता है, विदेशी

और घरेलू निवेशकों को आकर्षित कर सकता है बशर्ते कि देश में आय बढ़े तथा अधिक संख्या में लोग रोजगारशुदा हों और उनके कौशल में भी सुधार हो ।

विभिन्न अर्थव्यवस्थाएं नई क्षमताएं सीखने की प्रक्रिया के सहारे आगे बढ़ती हैं। किसी देश की घरेलू उद्यमिता को वह सब करना सीखना चाहिए जो वे पहले नहीं कर पाती थीं। इन उद्यमों में काम करने वालों को भी नए कौशल सीखने चाहिए। भारत को श्रम बाजार के बारे में अपने नजरिये में बुनियादी बदलाव की जरूरत है। श्रमिक केवल उत्पादन के संसाधन नहीं हैं कि जरूरत खत्म हो जाने पर उनको खारिज कर दिया जाए। वे किसी देश की वृद्धिशील परिसंपत्ति हो सकते हैं ठीक वैसे ही जैसे जापान के श्रमिक बने । यानी नए कौशल सीखते हुए और उद्यमिता को नवाचार के माध्यम से बढ़ाते हुए उच्चस्तरीय तकनीक के साथ प्रतिस्पर्धा करते हुए ।

जनसत्ता

Date: 23-04-25

आतंक का दायरा

संपादकीय



जम्मू-कश्मीर में पिछले कुछ समय से आतंकवादी संगठनों के हमले और उनकी सक्रियता में जिस कदर बढ़ोतरी देखी जा रही है, उससे यह चिंता स्वाभाविक है कि क्या यह समस्या एक बार फिर जटिल शकल अख्तियार कर रही है। इतना साफ है कि आतंक के रास्ते भारत में जो मकसद वे हासिल करना चाहते हैं, उसका पूरा होना संभव नहीं है, लेकिन यह भी देखा जा सकता है कि उनके हमलों की रणनीति में जो बदलाव आया है, वह इस समस्या

को और गंभीर बना रहा है। आए दिन वहां से अब आतंकी हमलों, उनसे सुरक्षा बलों की मुठभेड़, कुछ आतंकियों का मारा जाना या फिर किसी जवान की शहादत की घटनाएं अक्सर सामने आने लगी हैं। बीते कुछ वर्षों में पाकिस्तान स्थित ठिकानों से अपनी गतिविधियां संचालित करने वाले आतंकी संगठनों ने सुरक्षा बलों के शिविरों पर हमले करने के समांतर लक्षित हमलों की रणनीति अपनाना शुरू कर दिया है। अब इसी क्रम में आतंकियों ने पर्यटकों पर हमले शुरू कर दिए हैं, जिसके पीछे छिपी मंशा स्पष्ट दिखती है कि जम्मू-कश्मीर में पर्यटन या अन्य कारणों से आने वालों के भीतर खौफ पैदा किया जा सके।

कश्मीर में पहलगाम के बैसरन इलाके में मंगलवार को आतंकवादियों ने पर्यटकों पर गोलीबारी शुरू कर दी, जिसमें बीस से ज्यादा लोगों के मारे जाने और कई के घायल होने की खबर आई। दरअसल, जम्मू-कश्मीर की अर्थव्यवस्था में पर्यटन की भूमिका जगजाहिर रही है। माना जाता रहा है कि इसी वजह से आतंकवादी संगठन पर्यटन स्थलों का रुख करने वाले लोगों को कोई नुकसान नहीं पहुंचाते हैं, ताकि वहां पर्यटकों का आना-जाना निर्बाध रहे अगर देश-दुनिया से वहां घूमने जाने वालों के भीतर डर बैठा, तो वहां की अर्थव्यवस्था पर इसका विपरीत असर पड़ सकता है। लेकिन इस बार पर्यटकों को निशाना बना कर आतंकियों ने न केवल बाहरी लोगों को डराने, बल्कि वहां की अर्थव्यवस्था की रीढ़ पर हमला करने की कोशिश की है। इसके अलावा, जुलाई की शुरुआत में अमरनाथ यात्रा भी शुरू होने वाली है और वहां जाने का रास्ता पहलगाम से होकर गुजरता है। ऐसे में आतंकियों के इस हमले को अमरनाथ यात्रा को प्रभावित करने की कोशिश के तौर पर भी देखा जा रहा है।

पर्यटकों पर गोलीबारी हाल के दिनों में सबसे गंभीर घटना मानी जा रही है, जिसके पीछे मंशा न केवल सुरक्षा बलों और सरकार को चुनौती पेश करना, बल्कि बाहरी लोगों को डराना है। इससे उन्हें अपना एक मकसद यह भी पूरा होने की उम्मीद है कि वे स्थानीय और बाहरी लोगों के भीतर खाई पैदा कर सकेंगे। मगर ऐसे आतंकी हमलों के बाद अब वहां की स्थानीय आबादी के बीच आतंकियों के खिलाफ जिस तरह का आक्रोश देखा जाता है, वह भविष्य के लिए एक उम्मीद जगाता है। पहलगाम में पर्यटकों पर आतंकी हमले के बाद जम्मू-कश्मीर की मुख्यधारा की लोकतांत्रिक राजनीति में सक्रिय लगभग सभी दलों और उनके नेताओं ने इसकी तीखी आलोचना की और इसे कायराना हरकत बताया। मगर हकीकत यह भी है कि जम्मू-कश्मीर में राष्ट्रपति शासन का दौर रहा हो या फिर उसके बाद बड़ी जद्दोजहद के बाद शुरू हुई लोकतांत्रिक प्रक्रिया और उसके तहत चुनी हुई सरकार का गठन, आतंकी वारदात पर काबू पाने की कोशिशें नाकाम दिखती हैं। अगर सरकार की ओर से इस मामले पर ठोस और सुचिंतित कार्रवाई नहीं की गई, तो इसके दूरगामी घातक नतीजे सामने आ सकते हैं।

राष्ट्रीय
सहारा

Date: 23-04-25

नौकरशाही का ढर्रा

संपादकीय

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा है कि भारत की नौकरशाही और नीति- निर्माण प्रक्रिया पुराने ढर्रे पर नहीं चल सकती। इसलिए कि उनकी सरकार जिन नीतियों पर काम कर रही है, वे अगले एक हजार साल के भविष्य को आकार देंगी। नई दिल्ली में सिविल सेवा दिवस समारोह को संबोधित करते हुए सोमवार को प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि अब ऐसा माहौल बनाया जा रहा है कि जो आम नागरिकों के बीच उद्यमिता को प्रोत्साहित करता है और उन्हें बाधाओं से पार पाने में मदद करता है। इस संदर्भ में उन्होंने औद्योगीकरण और उद्यमिता की गति को नियंत्रित करने वाले नियामक के रूप नौकरशाही की पुरानी भूमिका का जिक्र भी किया और कहा कि अब ऐसा नहीं चलने वाला। खासकर इसलिए कि एक तो सरकार संकल्पबद्ध है कि 2047 तक भारत को विकसित राष्ट्र बनाना है, और दूसरा इसलिए भी कि आज का युवा बेहद महत्वाकांक्षी है, और किसान और महिलाओं जैसे सामाजिक समूहों के सपने ऊंचे हैं। ऐसे में सरकार की महत्वाकांक्षा और आमजन के सपने को पूरा करने में कारगर भूमिका नौकरशाही तभी निभा पाएगी जब वह अपने पुराने ढर्रे को बदले। कामकाज में जवाबदेही हमेशा से तवज्जो पाती रही है, और जवाबदेही के पैमाने पर ही नौकरशाही को चाक-चौबंद रखा जाता रहा है। लेकिन अब नौकरशाही को नई चुनौतियों और नये उभरे आकांक्षी समूहों के सपनों को साकार करने में उत्प्रेरक की भूमिका में आना होगा। उसे अपने कामकाज की गति असाधारण तरीके से तेज रखनी होगी। दरअसल, आज के युवा की परवरिश भी पुराने ढर्रे पर नहीं हुई है। वह अपने कार्यों को लेकर परिणामोन्मुख तेवर रखता है, और अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों को पूरा करने में स्वयं भी कोई शिथिलता नहीं बरतता। अदद नौकरी पाने का आकांक्षी भी नहीं रहा। अब वह उद्यमिता से प्रेरित है, इसलिए महज नौकरी पाने की लाइन में खटना नहीं चाहता। दरअसल, तेजी से बदल रहे समय के साथ कदमताल बनाए रखना हर किसी के लिए चुनौतीपूर्ण होता जा रहा है और कोई भी दौड़ में पीछे छूट जाने को तैयार नहीं है। नौकरशाही को भी नये परिवेश में जल्द से जल्द ढलकर विकास के सूत्रधार की भूमिका में आना होगा। नियमों की पुस्तिका टेबल पर रख कर दायित्व निर्वाह में जुटे रहने वाली नौकरशाही को बदलना ही होगा। लचीला, व्यावहारिक और प्रासंगिक बने रहने के लिए जरूरी होता है अपने ढर्रे को बदलना।

कटुता के विरुद्ध

संपादकीय

अपने बड़बोलेपन के लिए पहले भी अदालत की सख्ती का सामना कर चुके योगगुरु रामदेव को 'शर्बत जेहाद' वाली अपनी टिप्पणी के लिए एक बार फिर दिल्ली हाईकोर्ट का कोपभाजन बनना पड़ा है, तो यह उनके लिए वाकई चिंता की बात होनी चाहिए। इससे न सिर्फ लोगों की निगाह में उनकी छवि प्रभावित होती है, बल्कि अगली किसी भी चूक पर वह न्यायिक सदाशयता के हकदार नहीं रह पाएंगे। 'हमदर्द नेशनल फाउंडेशन इंडिया' की याचिका पर सुनवाई करते हुए हाईकोर्ट ने स्वामी रामदेव की कंपनी 'पतंजलि फूड्स लिमिटेड' को उचित ही पांच दिनों के भीतर अपने विज्ञापन हटाने का निर्देश दिया है। अपना शवंत ब्रांड जारी करते हुए उन्होंने जो कुछ कहा, वह आपत्तिजनक था। भले ही अपने वीडियो में उन्होंने किसी ब्रांड या समुदाय का नाम नहीं लिया है, पर मद्दरसे और मस्जिद बनाम गुरुकुल व आचार्यकुलम के उल्लेख के बाद क्या कुछ ढका छिपा रह जाता है? निस्संदेह ! यह समाज को सांप्रदायिक आधार पर विभाजित करने वाला बयान है और इससे अदालत की अंतरात्मा को ही नहीं, हरेक सौहार्दप्रिय भारतीय के अंतर्मन को झटका लगा। ऐसे में, हाईकोर्ट के निर्देश के गहरे निहितार्थ हैं- अपने उत्पाद बेचने के लिए देश के सामाजिक ताने-बाने से खिलवाड़ की इजाजत किसी को नहीं दी जा सकती!

दरअसल, धुवीकरण की राजनीति ने देश में एक ऐसे वर्ग को प्रोत्साहित किया है, जो अपनी हर उल्टी-सीधी हरकत को धर्म या समुदाय की आड़ में वैधता दिला देना चाहता है। कभी कोई संप्रदाय विशेष के ठेले वाले को अपने इलाके में सब्जियां बेचने से रोक देता है, तो कोई उनकी कैब या कूरियर सेवाएं लेने से इनकार कर देता है और कभी कोई आवासीय सोसायटी धर्म विशेष के लोगों को मकान किराये पर देने या खरीदने-बेचने के खिलाफ फतवे जारी कर देती है। इस मजबूत होते सांप्रदायिक धुवीकरण ने अब बड़े कारोबारियों को भी खुलेआम इसके दोहन के लिए प्रेरित कर दिया है।

स्वामी रामदेव ने स्पष्ट रूप से धार्मिक भावनाओं के आर्थिक दोहन के इरादे से ही वह प्रचार किया। मगर ऐसा करते हुए वह भूल बैठे कि जिस ब्रांड को वह लक्षित कर रहे हैं, उसे आर्थिक लाभ ही पहुंचा रहे हैं। उनके बयान के बाद जिस तरह से उस ब्रांड के पक्ष में आम लोग सामने आए, उससे आश्चर्य नहीं कि उसकी बिक्री ने नई ऊंचाई छूली हो !

वैसे भी, विज्ञापन की दुनिया का यह स्थापित विधान है कि अपने उत्पाद की खूबियां गिनाते हुए आप किसी प्रतिस्पर्द्ध उत्पाद या ब्रांड का उल्लेख नहीं कर सकते। फिर इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक के बीचोबीच खड़े हिन्दुस्तानी समाज का रहन-सहन इतना उदार और समावेशी है कि इसमें किसी संकीर्ण नजरिये वाले आह्वान से कुछ पल के लिए सुखियां तो बटोरी जा सकती हैं, पर बहुत व्यावसायिक लाभ नहीं बटोरा जा सकता। इसमें कोई दोराय नहीं कि स्वामी रामदेव ने योग को घर-घर पहुंचाया और इसे अपनी जीवनशैली का हिस्सा बनाकर असंख्य लोगों ने स्वास्थ्य लाभ भी उठाया। मगर जिस तरह से उनको बार-बार अदालत में अपनी वाणी के लिए खेद जताना पड़ रहा है और अपने शब्द वापस लेने पड़ रहे हैं, उससे तो यही लगता है कि उन्हें वाक्- साधना की अधिक जरूरत है। दिल्ली हाईकोर्ट में उन्हें आइंदा संभलकर बोलने का हलफनामा देना पड़ा है। अदालत के

रुख से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि अभिव्यक्ति की आजादी का अर्थ कुछ भी कहने की स्वतंत्रता नहीं है।
विषममन तो कतई नहीं!